अध्यात्म ज्ञान एवं चिन्तन संस्था

(SOCIETY FOR ADHYATMA STUDIES)

17, सिविल लाइन्स, कमिश्नर ऑफिस के सामने, मुरादाबाद – 244001
मो0 9412241221

ब्रह्म ज्ञान विचार गोष्ठी – 56

18.11.2012

"श्रीमद् भगवद् गीता"

दशम अध्याय

"विभूति योग"

निवेदक

डॉ0 यू0 के0 शाह
शाह नर्सिंग होम,
सिविल लाइन्स, मुरादाबाद
फोन नं0 9359716440

रविन्द्र नाथ कत्याल
अमर बसेरा,
सिविल लाइन्स, मुरादाबाद
फोन नं0 9837041945

सुधीर गुप्ता, एडवोकेट
17, सिविल लाइन्स,
मुरादाबाद
फोन नं0 9412241221

श्रीमद् भगवद् गीता
अध्याय – 10
"विभूति योग"

श्रीभगवान उवाच–

भूय एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः।
यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया।। 1।।

श्रीभगवान ने कहा–
हे महाबाहु! तुम एक बार फिर मेरे परम रहस्य और प्रभाव युक्त वचनों को सुनो, जो कि मैं तुम्हारे हित की कामना से कहूंगा क्योंकि मैं तुम्हे बहुत प्रिय हूं।

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः।
अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः।। 2।।

मेरी उत्पत्ति को न तो देवगण जानते हैं और न महर्षिगण ही जानते हैं क्योंकि मैं देवताओं का और महर्षियों का भी आदि कारण हूं।

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते।। 3।।

जो मुझे अजन्मा, अनादि तथा सम्पूर्ण लोकों का शक्तिशाली स्वामी जानता है मनुष्यों में ज्ञानवान वह व्यक्ति सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है।

बुद्धिः ज्ञानम् असंमोहः क्षमा सत्यं दमः शमः।
सुखं दुःखं भवो अभावो भयं च अभयमेव च।। 4।।

प्राणियों में बुद्धि अर्थात निश्चय करने की शक्ति एवं तत्व ज्ञान, अमूढ़ता, क्षमा, सत्य तथा इन्द्रिय निग्रह और मन का निग्रह तथा सुख–दुख, उत्पत्ति और प्रलय, भय और अभय आदि भावों की उत्पत्ति मुझसे ही होती है।

अहिंसा समता तुष्टिः तपो दानं यशः अयशः।
भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः।। 5।।

इसी प्रकार अहिंसा, समता, संतोष, तप, दान, यश और अपयश ऐसे नाना प्रकार के भाव मुझसे ही उत्पन्न होते हैं।

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा।
मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः।। 6।।

संसार के समस्त प्राणी पूर्व में हुये सात महर्षिगण और चार सनक आदि ऋषिगण तथा स्वायंभुव आदि चौदह मनुओं की प्रजा हैं, ये महर्षिगण आदि मेरे संकल्प से उत्पन्न हुये हैं। (अर्थात उक्त ऋषिगण आदि की उत्पत्ति ईश्वर के संकल्प से ही हुई है और इनके द्वारा इस सम्पूर्ण संसार को उत्पन्न किया गया है।)

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः।
सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः।। 7।।

जो व्यक्ति मेरी इस विभूति और योग शक्ति को तत्व से जानता है वह अविचल ध्यान योग द्वारा मुझमें ही एकी भाव से स्थित होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः।। 8।।

मैं ही इस सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति का कारण हूं और मुझसे ही सब जगत क्रियावान है। इस तत्व को समझकर बुद्धिमान व्यक्ति मुझे प्राप्त करते हैं। (बुद्धिमान व्यक्ति वह है जिसने अपने अंतःकरण का समन्वय कर लिया है, जिसमें बुद्धि, विवेक व ज्ञान है, जिसे अपने हित–अहित का ध्यान है, जो श्रेय का पथिक है, जिसने अपने अहंकार को साध लिया है, ऐसा व्यक्ति ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है।)

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च।। 9।।

निरन्तर मुझमें ही चित्त को लगाने वाले और मुझमें ही प्राणों को अर्पित करने वाले व्यक्ति परस्पर मेरा बोध कराते हुये और मेरे ही विषय में विचार करते हुये सन्तुष्ट होते हैं और सदैव मुझमें ही रमते हैं।

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन माम् उपयान्ति ते।। 10।।

निरन्तर मेरे ध्यान में लगे हुये और मुझे प्रेमपूर्वक भजने वाले उन व्यक्तियों को मैं ऐसा बुद्धियोग देता हूं जिससे वे मुझको ही प्राप्त होते हैं।

तेषामेव अनुकम्पार्थम् अहम् अज्ञानजं तमः।
नाशयामि आत्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता।। 11।।

उनके ऊपर अनुकम्पा करने के लिये ही मैं उनके अन्तःकरण में स्थित होकर ज्ञान से उत्पन्न हुये अंधकार को प्रकाशवान ज्ञान रुपी दीपक द्वारा नष्ट करता हूं।

अर्जुन उवाच–

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यम् आदिदेवम् अजं विभुम्।। 12।।

अर्जुन ने कहा–
हे प्रभु आप परम ब्रह्म, परम धाम और परम पवित्र हैं। आप सनातन दिव्य पुरुष, आदि देव, जन्म रहित और सर्वव्यापी हैं।

आहुस्त्वाम् ऋषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा।
असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे।। 13।।

आपको सभी ऋषिगण नारद, असित, देवल, व्यास ऐसा कहते हैं और स्वयं आपने भी मुझसे ऐसा कहा है।

सर्वम् एतत् ऋतम् मन्ये यन्मां वदसि केशव।
न हि ते भगवन् व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः।। 14।।

हे केशव! जो कुछ भी आप मुझसे कह रहे हैं इस सबको मैं सत्य मानता हूं। हे भगवन! आपके स्वरुप को न तो देवगण जानते हैं और न ही दानवगण जानते हैं।

स्वयमेव आत्मना आत्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते।। 15।।

हे पुरुषोत्तम, हे समस्त प्राणियों को उत्पन्न करने वाले, हे समस्त प्राणियों पर शासन करने वाले, हे देवों के देव, हे जगत के स्वामी आप स्वयं ही अपने आप को जानते हैं।

वक्तुमर्हसि अशेषेण दिव्या हि आत्मविभूतयः।
याभिः विभूतिभिः लोकान् इमान् त्वं व्याप्य तिष्ठसि।। 16।।

हे भगवन! आप ही अपनी उन दिव्य विभूतियों का सम्पूर्ण रुप से वर्णन कर सकते हैं जिन विभूतियों के द्वारा आप इन सब लोकों में व्याप्त होकर रहते हैं।

कथं विद्यामहं योगिन् त्वां सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया।। 17।।

हे योगेश्वर! मैं किस प्रकार निरन्तर चिन्तन करता हुआ आपको जान सकता हूं और हे भगवन! किन–किन रुपों में आपका ध्यान किया जा सकता है?

विस्तरेण आत्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन।
भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम्।। 18।।

हे जनार्दन! अपनी योग शक्ति को और विभूतियों को पुनः विस्तार पूर्वक कहिये क्योंकि आपके अमृतमय वचनों को सुनते हुये मेरी तृप्ति नहीं हो रही है (अर्थात सुनने की उत्कन्ठा बनी हुई है)।

श्रीभगवान उवाच –

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या हि आत्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ न अस्ति अन्तो विस्तरस्य मे।। 19।।

श्रीभगवान ने कहा –
हे कुरुश्रेष्ठ! अब मैं अपनी मुख्य दिव्य विभूतियों को तुम्हें बताऊगां क्योकि मेरे विस्तार का कोई अन्त नहीं है।

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशय स्थितः।
अहम् आदिश्च मध्यं च भूतानाम् अन्त एव च।। 20।।

हे अर्जुन! मैं सब प्राणियों के हृदय में स्थित सबका आत्मा हूं तथा सम्पूर्ण प्राणियों का आदि, मध्य और अन्त भी मैं ही हूं।

आदित्यानामहं विष्णुः ज्योतिषां रविः अंशुमान्।
मरीचिः मरुताम् अस्मि नक्षत्राणाम् अहं शशी।। 21।।

मैं आदित्यों में (अदिति के 12 पुत्रों में) विष्णु हूं और प्रकाशवानों में मैं सूर्य हूं, मरुतों में मैं मरीचि हूं और नक्षत्रों मे मैं चन्द्रमा हूं।

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः।
इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना।। 22।।

वेदों में मैं सामवेद हूं, देवताओं में मैं इन्द्र हूं, इन्द्रियों में मैं मन हूं और प्राणियों में मैं चेतना हूं।

रुद्राणां शंकरः चास्मि वित्तेशो यक्ष रक्षसाम्।
वसूनां पावकः चास्मि मेरुः शिखरिणाम् अहम्।। 23।।

एकादश रुद्रों में मैं शंकर हूं और यक्षों में धन का स्वामी कुबेर हूं, आठ वसुओं में मैं अग्नि हूं तथा शिखर वाले पर्वतों मे मैं सुमेरु पर्वत हूं।

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम्।
सेनानीनामहं स्कन्दः सरसाम् अस्मि सागरः।। 24।।

हे पार्थ! पुरोहितों में मुझे वृहस्पति जानों, सेनापतियों में मैं कार्तिकेय हूं और जलाशयों मे मैं समुद्र हूं।

महर्षीणां भृगुरहं गिराम् अस्मि एकम् अक्षरम्।
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः।। 25।।

महर्षियों में मैं भृगु हूं और वाणी में मैं ओमकार हूं, यज्ञों में जप यज्ञ हूं और स्थावरों (अचलों) में हिमालय हूं।

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः।। 26।।

सब वृक्षों में मैं पीपल का वृक्ष हूं और देव ऋषियों में नारद मुनि हूं। गंधर्वों मे चित्ररथ और सिद्धों में कपिल मुनि हूं।

उच्चैःश्रवसम् अश्वानां विद्धि माम् अमृतोत् भवम्।
ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम्।। 27।।

घोड़ों में मैं अमृत से उत्पन्न होने वाला उच्चैश्रवा नामक घोड़ा हूं और हाथियों में ऐरावत हूं। मनुष्यों में मैं राजा हूं।

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक्।
प्रजनः चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः।। 28।।

शस्त्रों में मैं वज्र हूं और गायों में कामधेनु हूं। सन्तान उत्पत्ति का हेतु मैं कामदेव हूं और सर्पों मे मैं वासुकि हूं।

अनन्तः चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम्।
पितृणाम् अर्यमा चास्मि यमः संयमताम् अहम्।। 29।।

मैं फन वाले नागों में शेषनाग हूं और जलचरों का अधिपति वरुण देव हूं। पितरों में मैं अर्यमा हूं तथा शासन करने वालों में मैं यमराज हूं।

प्रह्लादः चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम्।
मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम्।। 30।।

मैं दैत्यों में प्रहलाद हूं और समाप्त करने वालों में काल हूं। मैं पशुओं में सिंह हूं और पक्षियों मे गरुण हूं।

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां मकरः चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी।। 31।।

मैं पवित्र करने वालों में वायु हूं और शस्त्रधारियों मे राम हूं। जलचरों में मैं मगरमच्छ हूं और नदियों में गंगा हूं।

सर्गाणाम् आदिः अन्तश्च मध्यं चैव अहमर्जुन।
अध्यात्मविधा विधानां वादः प्रवदताम् अहम्।। 32।।

हे अर्जुन! सम्पूर्ण सृष्टियों का आदि, अन्त और मध्य मैं ही हूं। समस्त विद्याओं में मैं अध्यात्म विद्या हूं और सभी तर्कों में निर्णयात्मक तर्क मैं ही हूं।

अक्षराणाम् अकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च।
अहमेव अक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः।। 33।।

मैं अक्षरों में अकार और समासों में द्वन्द नामक समास हूं। मैं ही अक्षय काल हूं तथा मैं ही विराट स्वरुप सबका धारण व पोषण करने वाला हूं।

मृत्युः सर्वहरश्च अहम् उद्भवश्च भविष्यताम्।
कीर्तिः श्रीः वाक् च नारीणां स्मृतिः मेधा धृतिः क्षमा।। 34।।

मैं सबका नाश करने वाला मृत्यु हूं और मैं ही आगे उत्पन्न होने वालों की उत्पत्ति का कारण हूं। मैं ही स्त्रियों में कीर्ति, श्री, वाक, स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा हूं।

बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्दसामहम्।
मासानां मार्गशीर्षोऽहम् ऋतूनां कुसुमाकरः।। 35।।

सामवेद के गीतों में मैं बृहत्साम हूं। समस्त छन्दों में मैं गायत्री छन्द हूं। महीनों में मैं मार्गशीर्ष (अगहन) हूं तथा ऋतुओं में वसन्त ऋतु हूं।

द्यूतं छलयतामस्मि तेजः तेजस्विनामहम्।
जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम्।। 36।।

मैं छल करने वालों मे जुआ हूं और तेजस्वी व्यक्तियों का तेज भी मैं ही हूं। जीतने वालों का जय भी मैं हूं और निश्चय करने वालों का निश्चय भी मैं हूं तथा सात्विक व्यक्तियों का सात्विक भाव भी मैं हूं।

वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनंजयः।
मुनीनाम् अपि अहं व्यासः कवीनामुशना कविः।। 37।।

वृष्णि वंशियों में मैं वासुदेव हूं और पांडवों में मैं अर्जुन हूं। मुनियों में मैं व्यास हूं और कवियों में उशना (शुक्राचार्य) हूं।

दण्डो दमयताम् अस्मि नीतिः अस्मि जिगीषताम्।
मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवताम् अहम्।। 38।।

दमन करने वालों का मैं दण्ड (अर्थात दमन करने की शक्ति) हूं और विजय की इच्छा करने वालों की नीति हूं। गोपनीयों में अर्थात गुप्त रखने योग्य भावों में मैं मौन हूं तथा ज्ञानियों का ज्ञान भी मैं ही हूं।

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहम् अर्जुन।
न तदस्ति विना यत् स्यात् मया भूतं चराचरम्।। 39।।

हे अर्जुन! जो सब प्राणियों की उत्पत्ति का कारण है वह भी मैं ही हूं क्योंकि चराचर में कोई भी ऐसा नहीं है जो मेरे से रहित हो।

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परंतप।
एषः तु उद्देशतः प्रोक्तो विभूतेः विस्तरो मया।। 40।।

हे शत्रुओं के विजेता! मेरी दिव्य विभूतियों का कोई अन्त नहीं है। मैने तुमसे जो कुछ कहा वह तो मेरी अनन्त विभूतियों का संकेत मात्र है।

यद्यत् विभूतिमत् सत्त्वं श्रीमत् उर्जितम् एव वा।
तत्तत् ऐव अवगच्छ त्वं मम तेजो अंश संभवम्।। 41।।

जो–जो भी विभूतिवान, ऐश्वर्यवान, कान्तिवान और शक्तिवान वस्तुयें हैं उन सबको तुम मेरे तेज के अंश से उत्पन्न हुई ही जानो।

अथवा बहुना ऐतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्य अहमिदं कृत्स्नम् एक अंशेन स्थितो जगत्।। 42।।

अथवा इस प्रकार बहुत जानने की आवश्यकता क्या है, हे अर्जुन! इतना ही जानना पर्याप्त है कि मैं अपने एक अंश मात्र से ही इस सम्पूर्ण जगत में व्याप्त होकर इसे धारण करता हूं।

।। इति दशमोऽध्यायः।।